IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

आधुनिक लोकतंत्र व प्राचीन भारतीय जनंतान्त्रिक दृष्टिकोण का तुलनात्मक अध्ययन

[1] दिवाकर शर्मा, [2] डॉ. रविंद्र सिंह
[1] रिसर्च स्कालर, [2] ऐसोसिएट प्रोफेसर
[1]इतिहास एवं भारतीय संस्कृति
[1] देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, भारत

सारांश

भारत का लोकतांत्रिक अनुभव वास्तव में असाधारण रहा है, जिसने इस पारंपरिक ज्ञान को झुठला दिया है कि लोकतांत्रिक शासन की सफल स्थापना और रखरखाव के लिए आर्थिक विकास और सामाजिक समरूपता आवश्यक शर्तें हैं। भारत के लोकतंत्र के लचीलेपन का श्रेय देश की पश्चिमी उदार लोकतांत्रिक रूपों को अपने स्वयं के अनूठे सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भ में अनुकूलित करने की क्षमता को दिया जा सकता है, जिसके कारण विविध समूहों का सशक्तिकरण और मताधिकार हुआ है, सामाजिक न्याय और वैधता की भावना का निर्माण हुआ है, और एक जीवंत नागरिक समाज का विकास हुआ है जो संस्थागत सुधारों और अधिक सरकारी जवाबदेही के लिए दबाव डालना जारी रखता है। हालाँकि, भारतीय अनुभव असमानता को संबोधित करने और यह सुनिश्चित करने की लगातार चुनौतियों को भी उजागर करता है कि लोकतांत्रिक शासन के लाभ आबादी के सभी वर्गों के बीच समान रूप से वितरित किए जाते हैं। जबकि प्राचीन भारतीय लोकतंत्र की विरासत एक अधिक समावेशी और न्यायसंगत राजनीतिक प्रणाली के लिए प्रेरणा प्रदान करती है, आधुनिक भारतीय लोकतंत्र की वास्तविकता सामाजिक और आर्थिक असमानताओं की विरासत का सामना करने की आवश्यकता से चिह्नित है जो लोकतांत्रिक आदर्श की पूर्ण प्राप्ति को कमजोर करती रहती है।

कूट शब्द: जनतंत्र, लोकतंत्र, स्वशासन, लोकप्रिय संप्रभुता

परिचय

भारत की लोकतांत्रिक यात्रा उल्लेखनीय रही है, जिसने पारंपरिक ज्ञान को झुठलाया है कि लोकतांत्रिक शासन की सफल स्थापना और रखरखाव के लिए आर्थिक विकास और सामाजिक समरूपता आवश्यक शर्तें हैं। अपनी विशाल आबादी, भाषाई और सांस्कृतिक विविधता और आर्थिक विकास के अपेक्षाकृत कम स्तरों से उत्पन्न चुनौतियों के बावजूद, भारत सात दशकों से अधिक समय से एक संपन्न लोकतंत्र को बनाए रखने में कामयाब रहा है। लोकतंत्र को अक्सर एक पश्चिमी अवधारणा के रूप में देखा जाता है, जिसकी उत्पत्ति आमतौर पर प्राचीन ग्रीस में देखी जाती है। हालाँकि, भारत में लोकतांत्रिक परंपराओं का एक समृद्ध इतिहास है जो लोकतंत्र की आधुनिक अवधारणा से पहले का है [1][2][3]। लोकतंत्र के प्रति प्राचीन भारतीय दृष्टिकोण स्वशासन, विकेंद्रीकरण और व्यक्तिगत अधिकारों की मान्यता के सिद्धांतों में निहित था [4]। जैसा कि भारत दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के रूप में उभरा है, यह जांचना महत्वपूर्ण है कि इन प्राचीन लोकतांत्रिक आदर्शों ने देश की आधुनिक लोकतांत्रिक प्रथाओं को कैसे प्रभावित और आकार दिया है। यह प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक विचार की प्रमुख विशेषताओं की जांच करता है, जैसे स्थानीय शासन की भूमिका, व्यक्तिगत अधिकारों की मान्यता और सामाजिक समानता पर जोर। इसके अलावा, शोधपत्र विश्लेषण करता है कि इन सिद्धांतों को भारत के स्वतंत्रता के बाद के लोकतांत्रिक ढांचे में कैसे शामिल किया गया है, और इस प्रक्रिया में जो चुनौतियाँ और अवसर पैदा हुए हैं [5][6][7][8]। प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक दृष्टिकोण लोकतंत्र के पश्चिमी मॉडल से मौलिक रूप से अलग था। पश्चिम में, राजनीतिक विचार व्यक्तिगत अधिकारों के विषय और राज्य

और समाज द्वारा उन्हें कैसे संरक्षित किया जा सकता है, के इर्द-गिर्द विकसित हुआ है [9]। प्राचीन भारतीय लोकतंत्र की नींव पूर्व-आधुनिक भारत में, लोकतंत्र के विचार को प्राकृतिक व्यवस्था के विरुद्ध नहीं माना जाता था [10]। इसके बजाय, प्राचीन भारतीय लोकतंत्र की नींव व्यक्तिगत अधिकारों के आंतरिक मूल्य की मान्यता, सरकार और शासितों के बीच विश्वास के महत्व और हिंसा का सहारा लिए बिना सत्ता हस्तांतरण की एक व्यवस्थित प्रक्रिया पर बनी थी [11]। ग्राम-स्तरीय स्वशासन संरचनाएँ, जिन्हें पंचायतों के रूप में जाना जाता है, इस लोकतांत्रिक परंपरा की एक केंद्रीय विशेषता थी, जो स्थानीय निर्णय लेने और विविध हितों का प्रतिनिधित्व करने की अनुमति देती थी [12]। प्राचीन भारत की राजनीतिक और सामाजिक प्रणालियों में लोकतांत्रिक अभ्यास की चुनौतियाँ लंबे समय से विद्वानों और इतिहासकारों के लिए आकर्षण का स्रोत रही हैं, क्योंकि वे अक्सर समकालीन लोकतांत्रिक प्रथाओं के लिए उल्लेखनीय अंतर्दृष्टि और समानताएँ प्रकट करते हैं। इस शोध पत्र का उद्देश्य भारत के प्राचीन लोकतांत्रिक सिद्धांतों और आधुनिक समय के लोकतंत्रों पर उनके प्रभाव के बीच जटिल संबंधों का पता लगाना है।

आधुनिक लोकतंत्र की अवधारणा

आधुनिक लोकतंत्र की अवधारणा व्यापक अध्ययन और बहस का विषय रही है, जिसमें विद्वान और राजनीतिक विचारक इसकी जटिलताओं और बारीकियों से जूझते रहे हैं। इसके मूल में, लोकतंत्र को समाज की बहुआयामी स्थिति के रूप में समझा जा सकता है, जहाँ शासन, निवास, अन्यता और लोकाचार जैसे विभिन्न तत्व राजनीतिक परिदृश्य को आकार देने के लिए परस्पर क्रिया करते हैं और प्रतिच्छेद करते हैं [13]। जबकि लोकतंत्र की ऐतिहासिक और दार्शनिक नींव उदारवाद और लोकप्रिय संप्रभुता की धारणा से जुड़ी हुई है, लोकतंत्र की समकालीन समझ अधिक सूक्ष्म है, जिसमें कई राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कारक शामिल हैं [14]। आधुनिक लोकतंत्र का एक प्रमुख पहलू सरकार पर लोकप्रिय नियंत्रण का विचार है, जहाँ नागरिक निर्णय लेने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं और राजनीतिक समानता का आनंद लेते हैं [15]। इसे अक्सर लोकतंत्र के केंद्रीय सिद्धांत के रूप में देखा जाता है, क्योंकि यह लोगों को अपने प्रतिनिधियों को जवाबदेह ठहराने और उनके जीवन को प्रभावित करने वाली नीतियों को आकार देने का अधिकार देता है [16]। इसके अलावा, लोकतंत्र आंतरिक रूप से व्यक्तिगत स्वतंत्रता और कानून के शासन से जुड़ा हुआ है, जो नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा करने का काम करता है [17]। लोकप्रिय नियंत्रण और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बीच यह संतुलन महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह विविध दृष्टिकोणों की अभिव्यक्ति और एक जीवंत सार्वजनिक क्षेत्र के उत्कर्ष की अनुमति देता है [18]। हालाँकि, इन लोकतांत्रिक आदर्शों की प्राप्ति इसकी चुनौतियों के बिना नहीं है, क्योंकि समाज के भीतर लोकतंत्र की डिग्री सामाजिक, आर्थिक और ऐतिहासिक कारकों के आधार पर काफी भिन्न हो सकती है [19]। फिर भी, लोकतंत्र के सार्वभौमिक सिद्धांत, जैसे कि राजनीतिक समानता और लोकप्रिय संप्रभुता, वह आधार बने हुए हैं जिस पर आधुनिक लोकतंत्र का निर्माण और रखरखाव होता है। हालाँकि, लोकतंत्र का कार्यान्वयन इसकी चुनौतियों के बिना नहीं है, क्योंकि सामाजिक, आर्थिक और ऐतिहासिक कारक विभिन्न संदर्भों में इसकी स्थापना और स्थिरता को गहराई से प्रभावित कर सकते हैं। फिर भी, लोकतंत्र के सार्वभौमिक सिद्धांत, मानव प्रकृति की क्षमताओं और सीमाओं में निहित हैं, यह सुझाव देते हैं कि यह सरकार का एक ऐसा रूप है जो सभी समाजों के लिए उपयुक्त है, यद्यपि इसके व्यावहारिक प्रकटीकरण में भिन्नताएँ हैं [20]।

इसलिए, आधुनिक लोकतंत्र के अध्ययन में इसकी बहुमुखी प्रकृति, इसके ऐतिहासिक और दार्शनिक आधार और दुनिया के विभिन्न हिस्सों में इसके कार्यान्वयन को आकार देने वाले विभिन्न कारकों के जटिल परस्पर क्रिया की सूक्ष्म समझ शामिल है। आधुनिक लोकतंत्र की विस्तृत व्याख्या भारत में आधुनिक लोकतंत्र का विकास एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया रही है, जिसकी जड़ें देश की प्राचीन राजनीतिक परंपराओं में गहरी हैं। अपनी विशाल आबादी, भाषाई और सांस्कृतिक विविधता और आर्थिक विकास के अपेक्षाकृत कम स्तरों से उत्पन्न चुनौतियों के बावजूद, भारत सात दशकों से अधिक समय से एक संपन्न लोकतंत्र को बनाए रखने में कामयाब रहा है।[21][22] भारतीय लोकतंत्र के लचीलेपन में योगदान देने वाले प्रमुख कारकों में से एक देश की पश्चिमी उदार लोकतांत्रिक रूपों को अपने स्वयं के अनूठे सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भ में अनुकूलित करने की क्षमता है। इससे विविध समूहों का सशक्तिकरण और मताधिकार हुआ है, सामाजिक न्याय और वैधता की भावना का निर्माण हुआ है और एक जीवंत नागरिक समाज को बढ़ावा मिला है जो संस्थागत सुधारों और अधिक सरकारी जवाबदेही के लिए दबाव बनाना जारी रखता है।[23]

भारत में आधुनिक लोकतांत्रिक परिदृश्य को आकार देने में "पंचायतों" या ग्राम सभाओं जैसी पारंपरिक राजनीतिक संरचनाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। ये संस्थाएँ, जो भारतीय लोकतंत्र की आधुनिक संरचनाओं के साथ-साथ मौजूद रही हैं, ने विकेंद्रीकृत निर्णय लेने और नागरिक भागीदारी के सिद्धांतों को संरक्षित किया

है जो लोकतांत्रिक शासन के मूल में हैं। आर्थिक और सामाजिक चुनौतियों के बावजूद भारत के लोकतंत्र की सफलता को अक्सर व्यापक रूप से प्रचलित सिद्धांतों के एक उल्लेखनीय अपवाद के रूप में उद्धृत किया गया है कि आर्थिक विकास के निम्न स्तर और सामाजिक विविधता के उच्च स्तर लोकतांत्रिक शासन की स्थापना और रखरखाव में महत्वपूर्ण बाधाएँ उत्पन्न करते हैं। [24] हालाँकि, भारतीय अनुभव असमानता को दूर करने और यह सुनिश्चित करने की लगातार चुनौतियों को भी उजागर करता है कि लोकतांत्रिक शासन के लाभों को आबादी के सभी वर्गों के बीच समान रूप से वितरित किया जाए। विशेषाधिकार प्राप्त और बाकी लोगों के बीच विभाजन को दूर करने में विफलता भारत में लोकतांत्रिक राजनीति की पूरी क्षमता को पीछे रखने में एक प्रमुख योगदान कारक है।

भारत का लोकतंत्र में परिवर्तन

पारंपरिक "पूर्व-शर्तों" की कमी के बावजूद, भारत का लोकतंत्र में परिवर्तन, विकेंद्रीकृत शासन और भागीदारीपूर्ण निर्णय लेने के देश के समृद्ध इतिहास का प्रमाण है। प्राचीन भारतीय राजनीतिक व्यवस्थाएँ, जैसे कि पंचायत प्रणाली, स्थानीय स्तर पर स्वशासन और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में नागरिकों की सक्रिय भागीदारी पर जोर देती थीं [25]। रणनीतिक संस्थागत व्यवस्थाओं और राजनीतिक पूंजी की खेती के साथ मिलकर इस पथ-निर्भर दृष्टिकोण ने उत्तर-औपनिवेशिक युग में भारत के लोकतंत्र को सफलतापूर्वक मजबूत करने में योगदान दिया। इसके अलावा, दलितों जैसे ऐतिहासिक रूप से वंचित समूहों को समान शर्तों पर लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भाग लेने में सक्षम बनाने के लिए भारतीय संविधान के स्पष्ट उपाय, सामाजिक समानता और समावेशी शासन के लिए देश की दीर्घकालिक प्रतिबद्धता को प्रतिध्वनित करते हैं। समावेशिता का यह लोकाचार, जहाँ जाति और सामाजिक असमानता के अन्य रूपों को लोकतंत्र के सिद्धांतों के साथ असंगत माना जाता था, भारत के लोकतांत्रिक विकास में एक प्रेरक शक्ति रही है [26]। हालाँकि, भारत में लोकतांत्रिक व्यवहार की वास्तविकता इसकी चुनौतियों के बिना नहीं रही है। सामाजिक असमानता, विशेष रूप से जाति-आधारित भेदभाव के प्रतिकूल प्रभावों ने कई बार लोकतांत्रिक भागीदारी की गुणवत्ता और संसाधनों के समान वितरण को कमज़ोर किया है। फिर भी, भारत के लोकतांत्रिक संस्थानों की लचीलापन और सुधारों और अधिक जवाबदेही के लिए नागरिक समाज के लगातार प्रयास इन कमियों को दूर करने में सहायक रहे हैं। अंततः, प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक दृष्टिकोणों की जाँच देश के लोकतंत्र के अनूठे मार्ग और लोकतांत्रिक शासन पर वैश्विक प्रवचन में इसकी निरंतर प्रासंगिकता पर मूल्यवान प्रकाश डालती है। जबकि भारत का लोकतंत्र पूरी तरह से "असाधारण" नहीं हो सकता है, यह निश्चित रूप से ऐतिहासिक विरासतों, संस्थागत नवाचार और सामाजिक न्याय और राजनीतिक सशक्तीकरण के लिए चल रहे संघर्ष के बीच परस्पर क्रिया में एक आकर्षक केस स्टडी का प्रतिनिधित्व करता है [27]।

प्राचीन भारतीय जनतंत्र : एक अन्वेषण

प्राचीन भारत, जो अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और बौद्धिक कौशल के लिए जाना जाता है, जनतांत्रिक शासन की नींव सहित उल्लेखनीय राजनीतिक प्रणालियों की भूमि भी थी। आम धारणा के विपरीत कि जनतंत्र एक पश्चिमी निर्माण है, भारत की विकेंद्रीकृत निर्णय लेने और नागरिक भागीदारी की दीर्घकालिक परंपरा इस धारणा को चुनौती देती है। भारत के जनतांत्रिक लोकाचार की उत्पत्ति का पता इसके प्राचीन अतीत में लगाया जा सकता है, जहाँ गाँव की सभाएँ और परिषदें स्थानीय शासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं। ये संस्थाएँ, जिन्हें "पंचायत" के रूप में जाना जाता है, ऐसे मंच थे जहाँ ग्रामीण समुदाय के मुद्दों पर चर्चा करने और उन्हें हल करने के लिए एकत्रित होते थे, जो अक्सर आम सहमति और सामूहिक निर्णय लेने के सिद्धांतों पर आधारित होते थे। ग्रामीण भारत में सामाजिक परिवर्तन की धीमी गति ने इन पारंपरिक संरचनाओं को संरक्षित किया है, जो भारतीय जनतंत्र की आधुनिक संस्थाओं के साथ-साथ सह-अस्तित्व में हैं।

भारत का जनतांत्रिक अनुभव वास्तव में असाधारण रहा है, जिसने पारंपरिक ज्ञान को चुनौती दी है कि आर्थिक विकास और सामाजिक समरूपता जनतांत्रिक शासन की सफल स्थापना और रखरखाव के लिए आवश्यक शर्तें हैं। अपनी विशाल जनसंख्या, भाषाई और सांस्कृतिक विविधता और आर्थिक विकास के अपेक्षाकृत कम स्तरों के बावजूद, भारत सात दशकों से अधिक समय से एक संपन्न जनतंत्र को बनाए रखने में कामयाब रहा है। यह ऐतिहासिक पथ निर्भरता, रणनीतिक संस्थागत व्यवस्था और नागरिकों के बीच एक मजबूत राजनीतिक पूंजी के विकास के एक जटिल अंतर्क्रिया के माध्यम से हासिल किया गया है [28]। भारत के जनतंत्र के लचीलेपन का श्रेय देश की पश्चिमी उदार जनतांत्रिक रूपों को अपने स्वयं के अनूठे सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भ में ढालने की क्षमता को दिया जा सकता है। इससे विविध समूहों का सशक्तिकरण और मताधिकार हुआ है, सामाजिक न्याय और वैधता की भावना का निर्माण हुआ है और एक जीवंत नागरिक

समाज को बढ़ावा मिला है जो संस्थागत सुधारों और अधिक सरकारी जवाबदेही के लिए दबाव बनाना जारी रखता है। जबकि भारत की जनतांत्रिक यात्रा चुनौतियों से रहित नहीं रही है, जनतांत्रिक सिद्धांतों के प्रति देश की स्थायी प्रतिबद्धता और नवाचार और अनुकूलन की इसकी क्षमता शासन के एक अद्वितीय और लचीले मॉडल को आकार देने में सहायक रही है जो प्रेरणा और जिज्ञासा को जारी रखती है।

भारतीय जनतंत्र का लचीलापन

भारतीय जनतंत्र की लचीलापन में योगदान देने वाले प्रमुख कारकों में से एक देश की पश्चिमी उदार जनतांत्रिक रूपों को अपने स्वयं के अद्वितीय सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भ में अनुकूलित करने की क्षमता है। इससे विविध समूहों का सशक्तिकरण और मताधिकार हुआ है, सामाजिक न्याय और वैधता की भावना का निर्माण हुआ है, और एक जीवंत नागरिक समाज को बढ़ावा मिला है जो संस्थागत सुधारों और अधिक सरकारी जवाबदेही के लिए दबाव डालना जारी रखता है [29][30]। पारंपरिक राजनीतिक संरचनाओं, जैसे कि "पंचायतों" या ग्राम सभाओं की भूमिका भारत में आधुनिक जनतांत्रिक परिदृश्य को आकार देने में महत्वपूर्ण रही है। ये संस्थाएँ, जो भारतीय जनतंत्र की आधुनिक संरचनाओं के साथ-साथ सह-अस्तित्व में हैं, ने विकेंद्रीकृत निर्णय लेने और नागरिक भागीदारी के सिद्धांतों को संरक्षित किया है जो जनतांत्रिक शासन के मूल में हैं [31]। हालाँकि, भारतीय अनुभव असमानता को दूर करने और यह सुनिश्चित करने की लगातार चुनौतियों को भी उजागर करता है कि जनतांत्रिक शासन के लाभ जनसंख्या के सभी वर्गों के बीच समान रूप से वितरित किए जाएं।

आधुनिक लोकतंत्र और प्राचीन भारतीय जनतंत्र का तुलनात्मक विश्लेषण

जबकि आधुनिक लोकतंत्र को अक्सर एक विशिष्ट पश्चिमी अवधारणा माना जाता है, लोकतांत्रिक विचारों की जड़ें प्राचीन सभ्यताओं में पाई जा सकती हैं, जिनमें प्राचीन भारत भी शामिल है। स्वतंत्रता के बाद भारत का लोकतंत्र में परिवर्तन विशेष रूप से उल्लेखनीय रहा है, क्योंकि देश अपनी अपार विविधता और आर्थिक चुनौतियों के बावजूद एक लोकतांत्रिक प्रणाली को मजबूत करने और बनाए रखने में कामयाब रहा है। भारत के लोकतंत्र की सफलता विद्वानों की बहुत रुचि और बहस का विषय रही है। कुछ लोग तर्क देते हैं कि भारत के लोकतांत्रिक प्रयोग के सफल होने की संभावना नहीं थी, क्योंकि स्थिर लोकतंत्रों से जुड़ी पूर्व शर्तों की कमी थी, जैसे कि उच्च स्तर का आर्थिक विकास और सामाजिक समरूपता [32][33]। हालाँकि, भारत ने इन सिद्धांतों को गलत साबित कर दिया है, सात दशकों से अधिक समय तक एक कार्यशील लोकतांत्रिक प्रणाली को बनाए रखा है और अधिक राजनीतिक भागीदारी, चुनावी प्रतिस्पर्धा और नागरिक जुड़ाव के माध्यम से इसे गहरा किया है।

भारत के लोकतंत्र के लचीलेपन में योगदान देने वाले प्रमुख कारकों में से एक पश्चिमी उदार लोकतांत्रिक रूपों को गैर-पश्चिमी सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भों के साथ समेटने की इसकी क्षमता रही है। भारत का लोकतंत्र अपनी विविध आबादी की अनूठी जरूरतों और आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करने के लिए विकसित हुआ है, जो हाशिए पर पड़े समूहों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व और सशक्तीकरण के अवसर प्रदान करता है। इसके विपरीत, लोकतंत्र की प्राचीन भारतीय अवधारणा, जिसे "स्वराज" के रूप में जाना जाता है, ने सत्ता के विकेंद्रीकरण और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में नागरिकों की सक्रिय भागीदारी पर जोर दिया। 1990 के दशक में शुरू की गई पंचायती राज प्रणाली, स्थानीय स्तर पर इन प्राचीन लोकतांत्रिक परंपराओं को पुनर्जीवित करने का एक प्रयास रही है, जिसमें सफलता की अलग-अलग डिग्री हैं [34]। जबकि आधुनिक भारतीय लोकतंत्र और इसके प्राचीन समकक्ष कुछ सामान्य सिद्धांतों को साझा करते हैं, जैसे कि राजनीतिक भागीदारी और प्रतिनिधित्व का महत्व, वे अपने दृष्टिकोण और कार्यान्वयन में भिन्न हैं। प्राचीन भारतीय मॉडल स्थानीय स्वशासन और समुदायों के सशक्तीकरण पर अधिक केंद्रित था, जबकि आधुनिक भारतीय लोकतंत्र ने बड़े पैमाने पर एक मजबूत केंद्रीय सरकार के साथ पश्चिमी संसदीय प्रणाली का अनुसरण किया है [35]। कुल मिलाकर, आधुनिक और प्राचीन भारतीय जनतंत्र का तुलनात्मक विश्लेषण लोकतांत्रिक आदर्शों की स्थायी अपील पर प्रकाश डालता है, साथ ही इन सिद्धांतों को विभिन्न समाजों के अद्वितीय सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक संदर्भों के अनुकूल बनाने की आवश्यकता पर भी प्रकाश डालता है।

1) विकेंद्रीकृत स्थानीय शासन - प्राचीन भारत में पंचायत प्रणाली बनाम आधुनिक लोकतंत्रों में केंद्रीकृत शासन।
2) समावेशी भागीदारी - भारत में ऐतिहासिक रूप से वंचित समूहों को सक्षम बनाने के उपाय बनाम कुछ आधुनिक लोकतंत्रों में हाशिए पर पड़े समुदायों का बहिष्कार।
3) सामाजिक समानता पर जोर - प्राचीन भारत में लोकतांत्रिक सिद्धांतों के साथ जाति व्यवस्था की असंगति बनाम आधुनिक लोकतंत्रों में लगातार असमानता।

4) लोकतांत्रिक संस्थाओं का लचीलापन – भारत में नागरिक समाज और संस्थागत सुधारों के माध्यम से चुनौतियों का समाधान करने की क्षमता बनाम कुछ आधुनिक संदर्भों में लोकतांत्रिक संस्थाओं की कमज़ोरी।

आधुनिक भारत के संदर्भ में लोकतंत्र की जड़: –

भारत का लोकतंत्र, पश्चिमी उदार लोकतंत्रों के साथ कुछ समानताएँ साझा करते हुए, प्राचीन भारतीय राजनीतिक परंपराओं और आधुनिक लोकतांत्रिक रूपों का एक अनूठा मिश्रण है। पारंपरिक "पूर्व-शर्तों" की अनुपस्थिति के बावजूद, लोकतंत्र में देश का सफल संक्रमण, इसकी शासन प्रणालियों की पथ-निर्भर प्रकृति, संस्थागत व्यवस्थाओं की रणनीतिक तैनाती और राजनीतिक पूंजी की खेती के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। इसके अलावा, दलितों जैसे ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर पड़े समुदायों की भागीदारी को सक्षम करने के लिए भारतीय संविधान के स्पष्ट उपाय, सामाजिक समानता और समावेशी शासन के लिए देश की दीर्घकालिक प्रतिबद्धता को दर्शाते हैं। सामाजिक असमानता और लोकतांत्रिक व्यवहार पर प्रतिकूल प्रभावों से उत्पन्न लगातार चुनौतियों के बावजूद, भारत की लोकतांत्रिक संस्थाओं की लचीलापन और सुधारों के लिए दबाव बनाने के नागरिक समाज के प्रयास इन कमियों को दूर करने में सहायक रहे हैं [36]।

प्राचीन भारतीय जनतंत्र और आधुनिक लोकतंत्र में महिलाओं की भूमिका की तुलना

प्राचीन भारतीय जनतंत्र के उल्लेखनीय पहलुओं में से एक राजनीतिक निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी थी। कई प्राचीन भारतीय गणराज्यों और राज्यों में, महिलाओं को न केवल ग्राम सभाओं और परिषदों में भाग लेने की अनुमति थी, बल्कि वे राजनीतिक विमर्श को आकार देने और अपने समुदायों को प्रभावित करने वाले निर्णयों को प्रभावित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं। यह आधुनिक भारतीय राजनीति में महिलाओं के सीमित प्रतिनिधित्व के विपरीत है, जहाँ निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में उनकी भागीदारी ऐतिहासिक रूप से पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचनाओं और लिंग-आधारित भेदभाव से बाधित रही है। हालाँकि, हाल के दशकों में, स्थानीय सरकारी संस्थानों में महिलाओं के लिए आरक्षण के कार्यान्वयन जैसी सकारात्मक कार्रवाई नीतियों के माध्यम से महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को बढ़ाने के लिए ठोस प्रयास किए गए हैं। जबकि प्राचीन भारतीय जनतंत्र की विरासत एक अधिक समावेशी और न्यायसंगत राजनीतिक प्रणाली के लिए प्रेरणा प्रदान करती है, आधुनिक भारतीय लोकतंत्र की वास्तविकता महिलाओं और अन्य हाशिए के समूहों की सार्थक भागीदारी सुनिश्चित करने में लगातार चुनौतियों से चिह्नित है। इन गहरी जड़ें जमा चुकी असमानताओं को दूर करने में विफलता भारतीय लोकतंत्र की पूरी क्षमता को साकार करने में एक बड़ी बाधा बनी हुई है। प्राचीन भारत में महिलाओं ने राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं, जिनमें से कुछ शासक और नेता भी रहीं [37]। महाभारत और रामायण जैसे प्राचीन वैदिक ग्रंथों और महाकाव्यों में अक्सर मजबूत और प्रभावशाली महिला पात्रों का चित्रण किया गया है, जिन्होंने निर्णय लेने और शासन में महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं। इसके विपरीत, आधुनिक भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं की भागीदारी अधिक जटिल और असमान रही है। जबकि भारतीय संविधान महिलाओं के लिए समान अधिकारों की गारंटी देता है, जमीनी हकीकत गहराई से जड़ जमाए हुए पितृसत्तात्मक मानदंडों और सामाजिक पूर्वाग्रहों द्वारा आकार लेती रही है [38]। हालाँकि, पिछले कुछ दशकों में महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व में धीरे-धीरे वृद्धि हुई है और सरकार के विभिन्न स्तरों पर महिला नेताओं का उदय हुआ है, जो लोकतांत्रिक प्रक्रिया में अधिक लैंगिक समानता की ओर धीरे-धीरे बदलाव का संकेत देता है।

आधुनिक और प्राचीन भारतीय काल में लोकतंत्र के प्रमुख स्तंभ

प्राचीन भारत और आधुनिक लोकतंत्रों में लोकतंत्र के प्रमुख स्तंभों में से एक स्वशासन का सिद्धांत और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में नागरिकों की सक्रिय भागीदारी है। प्राचीन भारत में, पंचायत प्रणाली ने स्थानीय स्तर के स्वशासन के इस लोकाचार को मूर्त रूप दिया, जहाँ गाँवों को अपने समुदायों को प्रभावित करने वाले मामलों पर निर्णय लेने की स्वायत्तता थी। शासन के इस विकेन्द्रीकृत दृष्टिकोण ने नागरिकों की अधिक भागीदारी और स्थानीय आवश्यकताओं के प्रति जवाबदेही की अनुमति दी। इसके विपरीत, भारत सहित आधुनिक लोकतंत्रों को अक्सर शासन की अधिक केंद्रीकृत प्रणाली की विशेषता रही है, जिसमें निर्णय लेने की शक्ति राष्ट्रीय या राज्य स्तर पर केंद्रित होती है। हालाँकि, हाल के दशकों में, निर्णय लेने को लोगों के करीब लाने के प्रयास में, भारत में पंचायती राज प्रणाली जैसे स्थानीय शासन संरचनाओं को मजबूत करने और सत्ता के हस्तांतरण पर जोर दिया गया है [39]।

प्राचीन भारत और आधुनिक भारत में लोकतांत्रिक संस्थाएँ

प्राचीन भारतीय जनतंत्र और आधुनिक लोकतंत्रों के बीच तुलना का एक और महत्वपूर्ण पहलू लोकतांत्रिक संस्थाओं की प्रकृति है। प्राचीन भारत में, लोकतांत्रिक प्रथाएँ अक्सर पंचायत प्रणाली में निहित थीं, जो सामूहिक निर्णय लेने और स्थानीय विवादों के समाधान के लिए एक मंच के रूप में कार्य करती थी। ये संस्थाएँ भारतीय गाँवों के सामाजिक और सांस्कृतिक ताने-बाने में गहराई से समाहित थीं और सामाजिक सद्भाव बनाए रखने और समुदाय के सदस्यों के अधिकारों को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं। इसके विपरीत, आधुनिक भारतीय लोकतंत्र की विशेषता संसद, राज्य विधानसभाएँ और स्थानीय सरकारी निकायों जैसी लोकतांत्रिक संस्थाओं की अधिक औपचारिक प्रणाली है। जबकि ये संस्थाएँ प्रतिनिधि लोकतंत्र के लिए एक ढाँचा प्रदान करती हैं, सामाजिक असमानता, राजनीतिक हाशिए पर होने और औपनिवेशिक शासन की विरासत की चुनौतियों ने कई बार उनकी प्रभावशीलता को कमज़ोर किया है। कुल मिलाकर, भारत में प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक दृष्टिकोण और आधुनिक लोकतंत्र का तुलनात्मक विश्लेषण देश की समृद्ध राजनीतिक विरासत और समकालीन शासन की माँगों के साथ पारंपरिक प्रथाओं को समेटने के लिए चल रहे संघर्ष को उजागर करता है। इस शोध पत्र ने दिए गए स्रोतों का उपयोग करते हुए प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक दृष्टिकोण और आधुनिक लोकतंत्र के बीच प्रमुख समानताओं और अंतरों का पता लगाया है। जबकि प्राचीन भारत का विकेंद्रीकृत शासन, समावेशी भागीदारी और सामाजिक समानता पर जोर लोकतांत्रिक आदर्शों के साथ प्रतिध्वनित होता है, सामाजिक असमानताओं की निरंतरता और कुछ आधुनिक संदर्भों में लोकतांत्रिक संस्थाओं की नाजुकता से उत्पन्न चुनौतियाँ बताती हैं कि वास्तव में समावेशी और न्यायसंगत लोकतंत्र की ओर यात्रा एक सतत प्रयास बनी हुई है [40][41]।

निष्कर्ष

प्राचीन भारतीय जनतांत्रिक दृष्टिकोणों की जाँच देश के लोकतंत्र के अनूठे मार्ग और लोकतांत्रिक शासन पर वैश्विक प्रवचन में इसकी निरंतर प्रासंगिकता पर मूल्यवान प्रकाश डालती है। जबकि भारत का लोकतंत्र पूरी तरह से "असाधारण" नहीं हो सकता है, यह निश्चित रूप से ऐतिहासिक विरासतों, संस्थागत नवाचार और सामाजिक न्याय और राजनीतिक सशक्तिकरण के लिए चल रहे संघर्ष के बीच परस्पर क्रिया में एक आकर्षक केस स्टडी का प्रतिनिधित्व करता है। जैसा कि भारत आधुनिक समय के लोकतंत्र की जटिलताओं को नकारात्मक करना जारी रखता है, तो इसकी प्राचीन लोकतांत्रिक जड़ों की गहरी समझ कर देश की लोकतांत्रिक नींव को मजबूत करने और अपने सभी नागरिकों की समावेशी भागीदारी सुनिश्चित करने के प्रयासों को सूचित और समृद्ध कर सकती है।

संदर्भ

1. Wilujeng, S. R. (2016). MENINGKATKAN KUALITAS KEHIDUPAN BERBANGSA MELALUI BUDAYA DEMOKRASI. *HUMANIKA*, *19*(1), 145. https://doi.org/10.14710/humanika.19.1.145-157
2. Chaudhuri, P. R. (2005). AN INDIAN 'MODEL' OF DEMOCRACY? *Jadavpur Journal of International Relations*, *9*(1), 213–231. https://doi.org/10.1177/0973598405110013
3. Mukherjee, A. (2013). From fragmented existence to equal citizenship. *Voice of Dalit/Voice of Dalit*, *6*(1), 1–8. https://doi.org/10.1177/0974354520130101
4. Drèze, J., & Sen, A. (2002). Democratic practice and social inequality in India. *Journal of Asian and African Studies*, *37*(2), 6–37. https://doi.org/10.1177/002190960203700202
5. Mukherjee, A. (2013). From fragmented existence to equal citizenship. *Voice of Dalit/Voice of Dalit*, *6*(1), 1–8. https://doi.org/10.1177/0974354520130101
6. Jodhka, S. S. (2006). Caste and Democracy: Assertion and Identity among the Dalits of Rural Punjab. *Sociological Bulletin*, *55*(1), 4–23. https://doi.org/10.1177/0038022920060101
7. Krishna, A. (2007). Politics in the middle: mediating relationships between the citizens and the state in rural North India. In *Cambridge University Press eBooks* (pp. 141–158). https://doi.org/10.1017/cbo9780511585869.006
8. Nicholas, R. W. (1963). Village factions and political parties in rural West Bengal. *Journal of Commonwealth Political Studies*, *2*(1), 17–32. https://doi.org/10.1080/14662046308446986
9. Mukherjee, A. (2013). From fragmented existence to equal citizenship. *Voice of Dalit/Voice of Dalit*, *6*(1), 1–8. https://doi.org/10.1177/0974354520130101

10. Chaudhuri, P. R. (2005b). AN INDIAN 'MODEL' OF DEMOCRACY? *Jadavpur Journal of International Relations*, *9*(1), 213–231. https://doi.org/10.1177/0973598405110013
11. Chaudhuri, P. R. (2005b). AN INDIAN 'MODEL' OF DEMOCRACY? *Jadavpur Journal of International Relations*, *9*(1), 213–231. https://doi.org/10.1177/0973598405110013
12. Nicholas, R. W. (1963). Village factions and political parties in rural West Bengal. *Journal of Commonwealth Political Studies*, *2*(1), 17–32. https://doi.org/10.1080/14662046308446986
13. Peredo, A. M. (2004). Democracy, poverty and local responses. *Humanity & Society*, *28*(3), 322–339. https://doi.org/10.1177/016059760402800308
14. Sant, E. (2019). Democratic Education: A Theoretical Review (2006–2017). *Review of Educational Research*, *89*(5), 655–696. https://doi.org/10.3102/0034654319862493
15. Beetham, D. (2009). Democracy: universality and diversity. *Ethics & Global Politics*, *2*(4), 284–296. https://doi.org/10.3402/egp.v2i4.2111
16. Nweke, C. (2015). Democracy, leadership and nation building in Nigeria. *OGIRISI a New Journal of African Studies*, *11*(1), 154. https://doi.org/10.4314/og.v11i1.8
17. Sant, E. (2019). Democratic Education: A Theoretical Review (2006–2017). *Review of Educational Research*, *89*(5), 655–696. https://doi.org/10.3102/0034654319862493
18. Beetham, D. (2009). Democracy: universality and diversity. *Ethics & Global Politics*, *2*(4), 284–296. https://doi.org/10.3402/egp.v2i4.2111
19. Peredo, A. M. (2004). Democracy, poverty and local responses. *Humanity & Society*, *28*(3), 322–339. https://doi.org/10.1177/016059760402800308
20. Beetham, D. (2009). Democracy: universality and diversity. *Ethics & Global Politics*, *2*(4), 284–296. https://doi.org/10.3402/egp.v2i4.2111
21. Plattner, M. F., & Diamond, L. J. (2007). India's unlikely democracy. *Journal of Democracy*, *18*(2), 29. https://doi.org/10.1353/jod.2007.0033
22. Mitra, S. K. (2013). How Exceptional is India's Democracy? Path Dependence, Political Capital, and Context in South Asia. *India Review*, *12*(4), 227–244. https://doi.org/10.1080/14736489.2013.846783
23. Rudolph, S. H., & Rudolph, L. I. (2002). New dimensions in Indian democracy. *Journal of Democracy*, *13*(1), 52–66. https://doi.org/10.1353/jod.2002.0015
24. Mitra, S. K. (2013). How Exceptional is India's Democracy? Path Dependence, Political Capital, and Context in South Asia. *India Review*, *12*(4), 227–244. https://doi.org/10.1080/14736489.2013.846783
25. Drèze, J., & Sen, A. (2002). Democratic practice and social inequality in India. *Journal of Asian and African Studies*, *37*(2), 6–37. https://doi.org/10.1177/002190960203700202
26. Jodhka, S. S. (2006). Caste and Democracy: Assertion and Identity among the Dalits of Rural Punjab. *Sociological Bulletin*, *55*(1), 4–23. https://doi.org/10.1177/0038022920060101
27. Mitra, S. K. (2013). How Exceptional is India's Democracy? Path Dependence, Political Capital, and Context in South Asia. *India Review*, *12*(4), 227–244.
28. Plattner, M. F., & Diamond, L. J. (2007). India's unlikely democracy. *Journal of Democracy*, *18*(2), 29. https://doi.org/10.1353/jod.2007.0033
29. Suri, K. C. (1995). Competing interests, social conflict and the politics of caste reservations in India. *Nationalism and Ethnic Politics*, *1*(2), 229–249. https://doi.org/10.1080/13537119508428430
30. Singh, N., UC Santa Cruz, & University of California. (2017). Holding India Together: The Role of Institutions of Federalism. In *UC Santa Cruz Previously Published Works*. https://escholarship.org/content/qt47s2036r/qt47s2036r.pdf?t=q7cbao
31. Krishna, A. (2007). Politics in the middle: mediating relationships between the citizens and the state in rural North India. In *Cambridge University Press eBooks* (pp. 141–158). https://doi.org/10.1017/cbo9780511585869.006
32. Mitra, S. K. (2013). How Exceptional is India's Democracy? Path Dependence, Political Capital, and Context in South Asia. *India Review*, *12*(4), 227–244.
33. Plattner, M. F., & Diamond, L. J. (2007). India's unlikely democracy. *Journal of Democracy*, *18*(2), 29. https://doi.org/10.1353/jod.2007.0033

34. Hasan, Z. (2016). Democracy and growing inequalities in India. *Social Change*, *46*(2), 290–301. https://doi.org/10.1177/0049085716635432
35. Kolenda, P. (1976). The caste system of India on the skids: Totaled by democracy and a dynamic economy? *Reviews in Anthropology*, *3*(6), 669–681. https://doi.org/10.1080/00988157.1976.9977285
36. Plattner, M. F., & Diamond, L. J. (2007). India's unlikely democracy. *Journal of Democracy*, *18*(2), 29. https://doi.org/10.1353/jod.2007.0033
37. Drèze, J., & Sen, A. (2002). Democratic practice and social inequality in India. *Journal of Asian and African Studies*, *37*(2), 6–37. https://doi.org/10.1177/002190960203700202
38. Suri, K. C. (1995). Competing interests, social conflict and the politics of caste reservations in India. *Nationalism and Ethnic Politics*, *1*(2), 229–249. https://doi.org/10.1080/13537119508428430
39. Nicholas, R. W. (1963). Village factions and political parties in rural West Bengal. *Journal of Commonwealth Political Studies*, *2*(1), 17–32. https://doi.org/10.1080/14662046308446986
40. Kolenda, P. (1976). The caste system of India on the skids: Totaled by democracy and a dynamic economy? *Reviews in Anthropology*, *3*(6), 669–681. https://doi.org/10.1080/00988157.1976.9977285
41. Krishna, A. (2007). Politics in the middle: mediating relationships between the citizens and the state in rural North India. In *Cambridge University Press eBooks* (pp. 141–158). https://doi.org/10.1017/cbo9780511585869.006